अंतरा-शब्दशक्ति

# सुनहरे फूल शब्दों के

काव्य संग्रह

शुभ्रा झा

# सुनहरे फूल शब्दों के

(काव्य संग्रह)

शुभ्रा झा

अन्तरा शब्द शक्ति प्रकाशन

इंदौर,मध्यप्रदेश

**ISBN- 978-93-88102-02-5**

**अन्तरा शब्दशक्ति प्रकाशन**

कार्यालय: १५ नेहरु चौक वारासिवनी,जिला बालाघाट (म.प्र) ४८१३३१

शाखा: एस-२०७, नवीन भवन, इंदौर प्रेस क्लब परिसर, इंदौर (म.प्र.) ४५२००१

दूरभाष: (कार्या) ०७६३३-२५३१५९ मो ९४२४७६५२५९

अणुडाक -antrashabshakti@gmail.com

अंतरताना- www.antrashabdshakti.com

**प्रथम संस्करण २०१८ © शुभ्रा झा**

**मूल्य: ४०.००** रुपये

**आवरण चित्र :** संदीप सोनी, वारासिवनी

**मुद्रक-** शैलू कम्प्यूटर्स, वारासिवनी

**'Sunhare phool Shabdon ke' by 'Shubhra Jha'**

---

**वैधानिक चेतावनी** : इस पुस्तक का सर्वाधिकार सुरक्षित है | लेखक की लिखित अनुमति के बिना इसके किसी भी अंश को फोटोकापी एवं रिकार्डिंग सहित इलेक्ट्रोनिक अथवा मशीनी किसी भी माध्यम से अथवा संग्रहण और पुनर्प्रयोग की प्रणाली द्वारा किसी भी रूप में पुरुत्पार्दित अथवा संचारित प्रसारित नहीं किया जा सकता हैं |प्रस्तृत पुस्तक की समस्त रचनाएँ लेखक द्वारा अन्तरा शब्द शक्ति प्रकाशन को प्रेषित की गई हैं | अत :प्रत्येक रचना की मौलिकता के किसी भी दावे हेतु प्रत्येक लेखक जिम्मेदार हैं| प्रस्तुत पुस्तक के घटनाक्रम पात्र,भाषाशैली,एवं स्थान सभी लखक की कल्पना हैं | किसी भी प्रकार के वाद-विवाद के लिए प्रकाशक का सहमत होना अनिवार्य नहीं हैं

# भूमिका

कविताएँ हमेशा से ही हृदय की अव्यक्त भावनाओं का सदृश्य रूप रहीं हैं। कवि अपने मन के भावों को कविताओं के जरिये समय समय पर उजागर करता रहता है।मेरे लिए  मेरी कविताएँ मेरी भावनाओं का सदृश्य रूप है ही साथ  साथ  मेरी आत्मा को पोषित करने का माध्यम भी है।मैं अपनी कविताओं को अपनी साधना मानती हूँ  जिस प्रकार पूजन और ध्यान ईश्वर तक पहुंचने का जरिया है उसी प्रकार कविता लेखन भी मेरा ईश्वर से जुड़ने का मार्ग है। जब भी आसपास की कोई  घटना या परिस्थितियां मेरी आत्मा पर छाप छोड़ती है, भावनाएं कविताओं के रूप मे व्यक्त हो कर मुझे शांति देती हैं। अपनी कविता के माध्यम से मैं प्रकृति, ईश्वर या मनुष्य से जुड़ने का प्रयास कर खुद की आत्मा को संवेदनाओं से पोषित करती हूँ।

सत्तरह साल के छोटी उम्र में पिता को खोने की वेदना ने कहीं न कहीं मेरे अन्दर की संवेदनाओं को उसी अवस्था में बर्फ़ की भांति जमा दिया था। शारीरिक तौर पे भले ही मैंने सभी सामाजिक एवं व्यक्तिगत कर्तव्यों का पालन किया, मगर मेरा हृदय उसी दौर में ठहर गया जिस समय मैंने अपने पिता को खोया । आज बरसों बाद जब अन्तरा शब्द शक्ति के सहयोग से मुझे कविताएँ लिखने का मौका मिला मेरे अन्दर की सारी जमी संवेदनाएं कविताओं के रूप में प्रकट होने लगी। मैं हृदय से ईश्वर को धन्यवाद करती हूँ कि जो उन्होंने मुझे खोखले जीवन से निकाल कर अपने आप से मिलने का मौका दिया। मैं आज जो भी लिखती हूँ अपनी प्रसन्नता एवं संतुष्टि पाने हेतु लिखती हूँ, साथ ही मेरी कविताओं का उद्देश्य सामाजिक समस्याओं के प्रति लोगों का ध्यान आकर्षित करनाऔर उनके निवारण हेतु प्रेरित करना है।

**शुभ्रा झा**

**(दरभंगा)**

# अनुक्रमणिका


1. माँ 5

2. दुःख 6

3. आखिरी उत्सव 7

4. हताशा 8

5. बचपन 9

6. जिजीविषा 10

7. कैद 11

8. संतुलन 12

9. तंज 13

10. मौन 14

11. रूह 15

12. धुंध 16

# माँ

उसे नहीं लगती थी सर्दी
ठण्डक के महीनों  में
ममता की गरमाहट
दबी थी  उसके सीने में।

गरम रजाई गुड़ के लड्डू
आते हैं अब सपनों में,
कहाँ हैं दिन वो और वो रातें
गर्म दुध और गर्म चाय जब
मिलती थी सिरहाने में।

प्यार की गरमी मिलती मुझको
उसकी ठिठुरती हाथों मे
क्या पता क्या सुख वो पाती
सरदी में यूँ जीने में।

आज वहीं खुद को पाती हूँ
सरदी के महीने में
गरमाहट मिल जाती है खुद ही
बच्चों के संग जीने में।

माँ की ममता समझ सकी मैं
भाव जब मन मे जागे हैं
गवॆ हैं मुझको आज बहुत ही
किसी की माँ कहलाने में।

# दुःख

हाँ! दु:ख,..
नहीं शिकायत तुमसे और न ही कोई चिढ़,
यह सही है तुम हो कठोर और निष्ठुर भी,
तुम जब भी आते हो
मेरी क्षमता, मेरी शक्ति
सभी का आभास करा जाते हो,
मेरे अपनों से मेरा परिचय करा जाते हो,
बस याद रखना तुम आना उतना ही
जितना मेरी आत्मा सह सके,
मेरा हृदय झेल सके,
जब तक मैं संयम रख सकूँ,
अपनी भावनाओं पर,
अपने कर्तव्य पथ पर डटी रहूँ,
सत्य  का भान जब तक रहे
असत्य की जाल मे न फँस कर
पाप पुण्य  की राह भटक जाऊँ,
तुम्हारे होने से ही अनुभूति है,
संसार के सुखों का तुम्हारे ही कारण चल रहे है,
धर्म अधर्म के पहिए तुम्हारे ही कारण
कर्मफल का भय व्याप्त है धरा पर,
तो तुम आते रहो हमेशा,
और पूर्ण करते रहो सुख दुःख के चक्र को।

# आखिरी उत्सव

दिन रात जहाँ
एक से
चलते है अनवरत पल
जीवन मृत्यु भी
सिमट जाती है
एक दायरे में

सुबह के अजान से उठी
या  मंदिर की घण्टी में गूंजती
कोई आवाज हो,
पूजा का दिया या
चिता की आग,
सभी दिखते है एक से।

जब कभी बीच मझंधार
पड़ती है घाट की परछाई
ऐसा लगता है
दोनों लोक दिखते है एक से।
मौत और जिंदगी के
इस मिलन पर
इस पार से उस पार की

यात्रा में आते जाते लोग
अपने जीवन में मृत्यु से पहले
मोक्ष पाने हेतु करते
अनेकों प्रयास
कुछ अनोखे ही ढ़ग से
जीते है यहाँ लोग  जीवन

इस यात्रा में पाने को शिव
करते आराधना
झूमते गाते अपनी
यात्रा करते पूरी
खाली पेट से तृप्त आत्मा तक
होती है पूरी दूरी

पूरा शहर चलता है एक धुन पे
अपनी ही लय में नाचते
अपनी ही तान को छेड़ते
हर रोज मनाते है
लोग यहाँ
अपनी मृत्यु का उत्सव।

## हताशा

न चाहते हुए भी
भागते रहे तुम्हारी
तलाश में।

ढूँढते रहे तुमको
हम आँखों को
मूंद कर।

बंद कुओं में
चीखते हुए
खोखली बोली!

नाचते रहे हम
नर्तकों के भेष में
उत्सव मनाते हुए

खुशियों की कब्र पर
कबूतरों बन मंडराते रहे
मंदिर और मकबरे।

खो गई रुह
तुम्हें खोजते खोजते,
मिलीं न कुंजी जो खोले मुझको

और फिर फेर ली जो
दुनियाँ से आँखें
आहिस्ता से तुम आए

टटोल कर मुझे
शांति, अमरत्व,
सम्पूर्णता के साथ

मैं पागल
क्या ढूँढता था
मेरे अंदर थे तुम

बस दबे थे
परतों में
अहंकार और अज्ञानता के।

# बचपन

लो फिर से टांग आई आंगन के रस्सी पे
होली के रंगों में रंगीन दुप्पटा अपना।

गीली गीली बूंदें बन टपकता रहेगा
कई दिन मेरा रंगीन सपना।

दोपहर की धूप में अलसते हुए सूखेगा
बचपन की यादों की तरह अपने में गर्माहट समेटे।

सुखे दुप्पटे से जाती नहीं ख्वाबों की खुशबू
जैसे ख्वाहिशों से ही गूँथा हो हर ताना।

आहिस्ते से जब कभी छुएगी बावरी हवा कोई
कानों में कह जाएगी तुझको मेरा अनकहा फसाना।

मैं फिर से चली आऊँगी समेटने वो रंग बचपन के
खवाबों से रंगीन मेरे दुप्पटे को सम्भाले रखना।

# जिजीविषा

काँच की बोतलों में भर लेती हूँ
आँसू अपने जुगनू बन के
चमकते है
रात के अंधेरे में ।

हैं बड़े रंगीन और कुछ
खुरदरे भी
मैंने जीवन के हरेक
पन्ने पर शब्द जो उकेरे हैं।

तुम कभी जान भी नहीं पाओगे
मेरी जीने की ललक
मैंने अश्कों के
समंदर में भी कश्ती चलाई हैं।

जो चिल्लाते है मुझ पे
झुण्ड परछाईयों के
मैंने अक्सर उन्हें
उनकी ही शक्ल भी दिखाई हैं।

तुम देखते हो जो
कभी रोते मुझको
मैंने अनजाने में
उनमें भी हँसी ही छुपाई हैं।

# कैद

करती हूँ अर्पित आज खुद को,
गंगा के  पावन जल में
बुझ ही जाए क्या पता
जलता हृदय जो नित अनल में।

धो कर सदा को अपने पाप
हो जाऊँ मैं पावन नहा के
जो कैद करती आत्मा को
उस हर पाश को मैं यूँ बहा कर।

है सार्थक मेरा नहाना
जब कैद से मुक्ती मिले
हो पाप पुण्य से परे जब
दीप मन में एक जले।

हूँ खड़ी मैं नतमस्तक
सम्मुख तेरे ओ भूतनाथ
आज इस हवन अग्नि में
हर पाश का हो जाए नाश।

दंभ,तम और अहंकार
है पाश बन जकड़े हृदय
भस्म हो जल जाए सब
नव मनुज का हो उदय।

# संतुलन

रोज रख लेती हूँ
अपनी संवेदना का बोझ दिल पर,

एक तराज़ू के बाट बनकर
कभी घटती हूँ कभी बढ़ती।
तुम्हारे मन को करने को हल्का
हजारों बातें हैं जो सहती।

इतना भी मत जाओ नीचे
मैं गगन में पहुँच जाऊँ उड़के
मौत के बाद मेरे सोचो
रह जाएगा तराज़ू बिखरके।

अहंकार के शिखर से उतर के
एक बार मेरे पाले में बैठो,
मेरी भावनाओं को भी अब
अपनी उसी तराज़ू में तौलो।

माना करती हूँ बहस तुमसे
तोड़ देती हूँ हर सीमाएँ
एक नदी की तरह मैं भी
तोड़ती हूँ तटबंध सारे।

एक बार मुझे भी महसूस करना है
अपने वज़ूद का वजन
कभी होकर मुझसे भी हल्का
तुम भी लाओ ये संतुलन।

# तंज

जो सम्भाले मैं रखा
स्वर्णो सा अपना हृदय
राग द्वेष भाव का
होता रहा नित उदय।

सामना कर भी लेती
औरों का व्यवहार मैं
सह न पाई अपनों के
तंज का प्रहार मैं।

आत्म मंथन से भी मैनें
पाई नहीं कोई सुधा
सह सकूँ जो प्रहार
प्राण रक्षा के लिए।

मैं कहाँ से ले के आती
तंज जो निष्फल करें
भावनाओं के समर में
रह गए हर दाँव धरे।

हो बिखर के कण हुए
हृदय के अरमान मेरे
शोक कब तक मनाऊँ
रख के ये तंज सारे।

आगे बढ़ाया पग को अपने
विश्व मयी रण के पटल पर
स्वयं की पहचान की जब
हीनता से निकल कर।

है अगर मुझमें वो पौरूष
जग मुझे पहचान लेगा
दूसरों के तंज कब तक
हित मेरा रोके रखेगा।

क्यों मैं बदलूँ स्वर्णो हृदय को
लौह या पाषाण में
भेद दे हृदय को मेरे
है धार कहाँ किसी बाण में।।।।

# मौन

सुना है तुमने कभी "मौन" को,
आँखों से बहते अश्रु में।
उसकी एक बहन है चुप्पी,
एक सी लगती है,
है मगर अलग,
एक होठों में सज जाती,
एक दिल में जा बसती।
सुन सको तो सुनो,
जब भी मौका मिले,
एक बार मौन को।
जो है निस्सार स्वर,
चीर के रख देगी दिले दीवार ।
चुप्पी तो हैं छलावा,
दुःख के मेदनी पर नाचती नर्तकी।
थक के कुछ देर में रूक जाती है।
मौन चुरा ले स्वप्न नयन के
एक ज्वालामुखी बन के हृदय में
सुन सको तो मौन सुनना ।

## रूह

दूर से आती घण्टे की नाद,
टपटपाते घोड़े की नाल।
लहराता लाल कपड़ा मुण्डेर पे,
गूंजती बाँसुरी की तान।

जाग जाती हूँ चौंक कर,
अक्सर मैं अकेले में।
उलझन में फँसी रूह
कस्तूरी बन मेले में।

आईना भी कहाँ वो
दिखा दें शक्ल रूह की।
बदल जाती कफन तो
न जाने कब ,बदन की।

हर सफर में ढूँढ़ती हैं
रूह अपनी हीं कहानी।
मौत के भंवर में उलझी
जो हैं सदियों से रूमानी।

घुम काशी और काबा
दर दर ढूँढ रहा ये मन ।
पूरा करदे हिस्सा अधूरा
पा लूँ मैं  एक ऐसा दर्पण।

# धुंध

क्या हुआ जो धुंध छाई
अब हमारी राहों में,
मैं खड़ी हूँ अब भी प्रियतम
धूप लिए  बाँहों में।

तुम गगन की सैर कर लो
उड़ जाओ नित अरमान लिए
मैं सम्भाले हूँ यहाँ
ईंट तुम्हारी राहों में।

डर न कोई दुरियों की
और न ही समय बाधा
बाँट लेना नभ के तारे
जो मिले उसे आधा।

माना दबी रह जाउँगी मैं
ईंट के नीचे बिखर के
आँखों सें छलकूँगी तेरे,
बुलंदी के शिखर पर।

मत ये सोचो  हूँ मैं तन्हा
संग मेरे तेरे जज्बात हैं,
छट ही जाएगी धुंध सारी
बस रात ही बिताने की बात है।

# व्यक्तित्व दर्पण

नाम - शुभ्रा झा
जन्म - 13.07.1980
माता - श्रीमती माधुरी मिश्रा
पिता - स्व. श्री गोलोकनाथ मिश्रा
पति - श्री संतोष कुमार झा
शिक्षा - पोस्ट ग्रेजुएट (माक्रोबाईलोजी), बी.एड. (ईग्णु)
निवास - 502, राधिका अपार्टमेंट, पायोनियर हॉस्पिटल, स्टेशन रोड, सीकर (राजस्थान)
मो. - 9462632956
ई मेल -
प्रकाशन - लोकरंग, अमर उजाला एवं विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में रचनाएं प्रकाशित। नारी से नारी तक काव्य संग्रह, भारत के युवा कवि एवं कवयित्रियाँ, सृजन समीक्षा अंतरा शब्द शक्ति आदि में प्रकाशन ।
सम्मान - श्रेष्ठ युवा रचनाकार सम्मान ।
उद्देश्य - आत्म विवेचना एवं संतुष्टि साथ ही साथ विभिन्न सामाजिक समस्याओं के प्रति लोगों का ध्यान आकर्षित करना।

यदि आप अंग्रेजी में हस्ताक्षर करते हैं तो निवेदन है कि 'हिन्दी में हस्ताक्षर करें', आपकी यह छोटी-सी कोशिश हिन्दी को राजभाषा से राष्ट्रभाषा बनाने में अमूल्य योगदान देगी ।

Women आवाज़ आधी आबादी की गूँज...
www.WomenAawaz.com
अन्तरा शब्दशक्ति
www.antrashabdshakti.com
978-93-88102-02-5
मूल्य 40/-
१५, नेहरु चौक, मेन रोड वारासिवनी, जि. बालाघाट (म.प्र.) पिन ४८१३३१, संपर्क- ९४२४७६५२५९, अणुडाक: antrashabdshakti@gmail.com